आई.एस.एस.एन. संख्या : 2454–2458
नवरचना NAVRACHNA
वर्ष 1, अंक 1, जून 2015, पृ. 45–50

नारीवादी शोधपद्वति के विभिन्न आयाम

सुमित सौरभ श्रीवास्तव

सामाजिक व्यवस्था की प्रकृति और विशिष्टता का मनवीय अध्ययन उतना ही प्राचीन है जितना पुराना यह विषय है। यह मानव मस्तिष्क का सहज स्वभाव है कि यह अपने आस–पास हो रही घटनाओं की तह तक पहुंचना चाहता है, जिसे 'जिज्ञासु मन' भी कहा जाता है। यद्यपि समय के साथ जानने की विधियां और तरीके बदल गये है जिसके फलस्वरुप सामान्य समझ से ज्ञान प्राप्त करने के स्थान पर अब अधिक परिशुद्व एवं सैद्वान्तिक अवधारणाओं का प्रयोग होने लगा है तथा समाज विज्ञान में अनेकों सैद्वान्तिक प्रतिमानों का उदय हुआ है। प्रस्तुत शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य नारीवादी शोधपद्वति तथा इसके विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालना है। मोटे तौर पर, पद्वति से तात्पर्य शोध की स्वयं की उन सभी समग्र 'कार्यक्षेत्रीय पूर्वधारणाओं' से है जो विचार उत्पत्ति से लेकर शोध परिणाम तक जाती है। तथा तत्पश्चात सामाजिक जगत के सामान्यीकरण में फलित होती हैं, यह सामान्यीकरण भले ही सूक्ष्म/विशद हो सकता है। इस प्रकार शोधपद्वति को –सामाजिक अनुसंधान को कैसे आगे बढ़ाना है या कैसे किया जाना है, के सिद्वान्त तथा विश्लेषण के रुप में समझा जा सकता है। शोध पद्वति का उपागम एक प्रकार से सामाजिक सिद्वान्त एवं अनुसंधान के मध्य सम्बन्ध की रुपरेखा को प्रस्तुत करने के साथ–साथ अध्ययन के सैद्वान्तिक एवं दार्शनिक आधारों का परीक्षण भी करता है। जबकि शोध प्रविधियां ऐसे वास्तविक साधन हैं जिनका प्रयोग शोध प्रक्रिया में किया जाता है जिसमें कुछ विशिष्ट प्रविधियों को सम्मिलित किया जाता है, इनमें तथ्यों का संकलन करने हेतु साक्षात्कार, प्रतिभागी और गैर प्रतिभागी अवलोकन, फोकस समूह चर्चा, सर्वेक्षण इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। यहाँ यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि अनुसंधान की शोध प्रणाली इस बात को काफी हद तक निर्धारित करती है कि किन तरीकों से सामाजिक व्यवस्था का अध्ययन सबसे उपयुक्त हो सकता है; उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति एक ऐसे ज्ञान प्रतिमान का निर्माण करना चाहता है तो उसे न केवल अपने आप वासतविकता को समझना होगा अपितु दूसरों के अनुभवों को भी आधार बनाना होगा। अतः इसमें वे सभी दार्शनिक और ज्ञान–पद्वतिशास्त्रीय (एपिस्टोमोलॉजिकल) अवधारणाएं शामिल हो सकती हैं जिस रुप में शोधकर्ता द्वारा सामाजिक वास्तविकता को देखता व समझता है और वह अपमे अध्ययन में किन महत्वपूर्ण विषयों का अध्ययन करना चाहता है? जिस प्रकार से सामाजिक जगत को समझा और अनुभव किया जाता है वह उसके अध्ययन की शोध प्रणाली पर बहुत भली भांति प्रहार करेगा। एक प्रकार से शोधा पद्वति तथ्यों का संकलन करने के लिये प्रयुक्त प्रविधियों से अधिक है।

नारीवादी शोध पद्वति उपागम : व्यक्तिपरकता एवं अर्न्तमुखीयता

प्रस्तुत शोध प्रत्र नारीवादी शोध पद्धति पर केंद्रित है जो कि नारीवादी शोध के लिये आवश्यक है। इसके अन्तर्गत 'जेन्डर' को शोध प्रक्रिया तथा जांच के स्पष्ट केन्द्र के रुप में स्थापित किया जाता है। किसी भी शोध को नारीवादी तभी कहा जायेगा जब इसको निश्चित शोध परम्पराओं के अन्तर्गत स्थापित किया जाता है जो कि महिलाओं के विषयों, अभिव्यक्तिों और 'अनुभवों' को गौरान्वित करते हैं (हेस्से–बीबर, 2004)।

सहायक प्रोफेसर वैश्वीकरण एवं विकास अध्ययन केंन्द्र इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद उत्तर प्रदेश– 211002
ईमेल– **sumit.manjula@gmail.com**

इस सैद्धांतिक रूप की परिकल्पना अन्य सैद्धांनिक रूपों से बहुत अलग होती है, ज्ञान के सन्दर्भ में यह कहा जाता है कि इसका स्वरूप और निर्माण एक ऐसी प्रक्रिया को देखा जाये तो हम यह पाते है कि स्त्रियों ऐतिहासिक रूप में इस प्रक्रिया को देखा जाये तोह हम यह पाते है कि स्त्रियां ऐतिहासिक रूप से इस प्रक्रिया में नही रहा है इस कारण से उनका किसी भी प्रकार का योगदान ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से बाहर रही है इस कारण से उनका किसी भी प्रकार का योगदान ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में नही रहा है इसी कारण स्त्रियों के मुद्द भी ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से बाहर रहे है नारीवादी शोध पद्धति और नारीवादी ज्ञान रचना दोनों निर्माण की प्रक्रिया से बाहर रहे है नारीवादी शोध पद्धति और नारीवादी ज्ञान रचना दोनों ही स्त्रियों के इस ऐतिहासिक बहिष्करण का विरोध करती है और इसका समाधान भी बताती है।

यहाँ इस बात को समझना जरूरी है कि नारीवादी शोध पद्धति नृवंशविज्ञान और अन्य तरीकों से भी महिलाओं के जीवन और अनुभवों का विवरण एकत्र करती है। साथ ही साथ तथ्यों के संकलन हेतु गहन–साक्षात्कार और जीवन–इतिहास अध्यन विधि का भी प्रयोग करती है। इसके अतिरिक्त यह पुरूष–केंद्रित ज्ञान जिसे वैज्ञानिक और तार्किक कहा जाता है, उसका भी विरोध करती है। इस प्रकार नारीवादी सोच और विचारधारा स्वयं को वैकल्पिक ज्ञान के निर्माण की एक प्रक्रिया के रूप में स्थापित करने का प्रयास करती है। नारीवादी शोध के सन्दर्भ में यह कहना आवश्यक है कि ज्ञान के वैसे आधारों को बदला जाये जिसमें स्त्रियों के अनुभवों और उनकी बातों को शामिल नहीं किया गया है। अतः ज्ञान का पुनर्निर्माण करना अति आवश्यक है ताकि ज्ञान–निर्माण सिर्फ पुरूषों के ही अधिकार क्षेत्र तक ही सीमित न रहे, बल्कि समाज के सभी सदस्यों का समावेश इस प्रक्रिया में हो।

नारीवादी शोध पद्धति के आलोचनात्मक दृष्टिकोण का महत्व रेगे (2003: 38) द्वारा उल्लिखित किया गया है। इनके अनुसार ज्ञान उत्पादन में अलग–अलग समूहों के अंतर और विषेशाधिकार की संरचना को समझना महत्वपूर्ण है। इनका तर्क है कि नारीवादी शोध पद्धति ज्ञान का वैज्ञानिक मार्ग और पुरूष केंन्द्रित ज्ञान, दोनों की ही आलोचना करता है। इनका यह भी मानना है कि ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में और इस प्रकार की (नारीवादी) प्रविष्टि (या घुसपैठ) आज के समय में बहुत ही आवश्यक है।

नारीवादी शोध प्रविधि दृष्टिकोणः महत्वपूर्ण विषय

नारीवादी अनुसंधान और कार्यप्रणाली में विभिन्न मुद्दे शामिल है। इनमें से कुछ हैं–सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में विषयनिष्ठ (सब्जेक्टिविटी)/वस्तुनिष्ठ (औब्जेक्टिविटी) और मूल्य निरपेक्षता/रिफ्लैक्सिविटी के मुद्दे इत्यादि। नारीवादी अनुसंधान को समझने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किस प्रकार से शोधकर्ता अपने आप को नारीवादी मानता है और उसी नारीवादी दृष्टिकोण से किस प्रकार से समाज का अध्ययन करता है। अतः शोधकर्ता अपने शोध की प्रक्रिया में उन सभी बातों का उल्लेख एवं प्रयोग करे, जो पुरुष केंन्द्रित ज्ञान की आलोचना करता है।

यह रेखांकित करने की आवश्यकता है कि ''ज्ञान–पद्वतिशास्त्र (एपिस्टोमोलॉजी) और अनुसंधान के तरीकों के बीच महत्वपूर्ण संबंध है'' (हार्डिंग, 1987: 3)। ज्ञान–पद्वतिशास्त्र में यह अध्ययन किया जाता है कि व्यक्ति या समूह 'ज्ञान का निर्माण' कैसे करता है। यह ज्ञान का सिद्धांत है और ज्ञान के प्रकषति, स्रोतों तथा सीमा का अध्ययन करता है। जानने की यह प्रक्रिया सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण है। यह कई विधियों के सहयोग से तथ्यों का संकलन करता है और उन तथ्यों के आधार पर ही सामाजिक वास्तविकता को रेखांकित करता है। यह ज्ञाता और ज्ञात के बीच सत्ता के सम्बन्ध और/या पदानुक्रम को भी दर्शाता है।

ज्ञाता एक वैज्ञानिक और तर्कसंगत व्यक्ति के रूप में जाना और माना जाता है। मानवतावादी/व्याख्यात्मक परंपरा को समझने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि शोधकर्ता किस प्रकार से अपने विषयनिष्ठता के कई आयामों को अपने अनुसंधान की प्रक्रिया में नियंत्रित अथवा प्रयोग करता है। अगर उसने अपने विषयनिष्ठता को इस कारण से नियंत्रित किया ताकि किसी भी प्रकार से वह उससे प्रभावित होकर गलत शोध–निष्कर्ष पर न आये तो इसका अर्थ है कि उसने अपने शोध को एक 'वैज्ञानिक और तार्किक' रूप प्रदान किया। इसके ठीक विपरीत अगर उसकी विषयनिष्ठता और रिफ्लैक्सिविटी ने उसके शोध को एक नयी दिशा दी, जिसके परिणामस्वरूप उसने सामाजिक वास्तविकता को एक

अलग तरीके से (नारीवादी अनुसंधान और कार्यप्रणाली की सहायता से) परिभाषित किया तो इसका तात्पर्य है कि उसने प्रत्यक्षवादी ज्ञान के एक विकल्प की स्थापना की। एंडरसन (1995: 54) ने यह कहा है कि ''नारीवादी एपिस्टोमोलोजी ऐसी सामाजिक ज्ञान–मीमांसा की शाखा के रूप में माना जा सकता है, जो ज्ञान के उत्पादन और निर्माण की प्रक्रिया में एक सामाजिक अवधारणा के रूप में लिंग और लिंग विशेष के हितों और अनुभवों के प्रभाव की जांच करता है''।

इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि ज्ञान के एक विकल्प के रूप में नारीवादी ज्ञान और शोधप्रविधि को फूको द्वारा उल्लिखित ''ज्ञान के पुनरूत्थान'' और ''अधीनस्थ ज्ञान" (सबजुगेटेड नौलेज) के रूप में स्थित किया जा सकता है। फूको ने ''ज्ञान के पुनरूत्थान'' के मूल स्वरूप का रेखांकन करते हुए कहा है कि ''अधीनस्थ ज्ञान" एक ऐसा ज्ञान है, जिसे ज्ञान के रूप में अयोग्य घोषित कर दिया गया है अथवा वैज्ञानिकता के पदसोपान/पदानुक्रम पर सबसे नीचले स्तर पर स्थित किया गया है क्योंकि इस तरह के ज्ञान में वैज्ञानिकता का अभाव होता है'' (फूको, 1994: 203)। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी ज्ञान की महत्ता इस बात से सिद्ध होती है कि उस ज्ञान में कितनी वैज्ञानिकता है। यहाँ वैज्ञानिकता का अर्थ विज्ञान से नहीं है, बल्कि एक ऐसी प्रणाली से है, जिसने ऐतिहासिक रूप से ज्ञान को अपनी सीमाओं में बांध रखा है यह वैज्ञानिकता इस बात को अधिक महत्व देती है कि तथ्यों का संकलन किस तरह से हुआ, उनका विश्लेषण किस तरह से हुआ, क्या शोधकर्ता के वैयक्तिक मूल्यों से शोध प्रभावित हुआ कि नहीं इत्यादि।

नारीवादी ज्ञान और शोध प्रविधि इन सभी बातों को ध्यान में न रखकर उन बातों पर ध्यान देती है, जिसके कारण कुछ लोगों एवं समूहों को ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से बाहर रखा गया। यह इस बात का विश्लेषण करती है कि किन लोगों को ज्ञान–निमार्ण की प्रक्रिया में सम्मिलित किया गया। इस सन्दर्भ में कुमार (1994) का तर्क है कि इस प्रकार के अध्ययन के तहत एक अलग तरह के 'विषय' की रूपरेखा तैयार की जाती है जिसमें लिंग आयाम प्रमुखता से रेखांकित किया जाता है। उनका तर्क है कि ''वैज्ञानिक'' ज्ञान प्रणाली एक ऐसी श्रेणी का निर्माण करती है जिसमें स्त्रीवादी ज्ञान को कोई जगह नहीं दी जाती है। इस तरह की श्रेणी एकलवादी सोच का निर्माण करती है क्योंकि वह बहुलवादी ज्ञान की रचना नहीं करती। इसके विपरीत, ज्ञान के एक पुनरूत्थान के रूप में नारीवादी ज्ञान–मीमांसा या ज्ञान की रचना इस प्रकार से सामाजिक वास्तविकता के प्रति एक बहुलवादी और उदारवादी सोच–समझ है।

नारीवादी ज्ञान–मीमांसा एवं प्रत्यक्षवाद

नारीवादी ज्ञान–मीमांसा प्रत्यक्षवादी (positivism) कार्यप्रणाली और तथ्य–संकलन के तरीकों, दोनों की ही आलोचना करती है क्योंकि क्यूंकि प्रत्यक्षवाद (positivism) अपने आप को वैज्ञानिकता पर आधारित मानती है (बिल्सन 191: 202–205)। हेस्से–बीबर आदि (2004: 5) का मानना है कि मोटे तौर पर प्रत्यक्षवाद यानी वैज्ञानिक पद्धति प्राकषतिक विज्ञान के तरीकों का उपयोग करता है। यह मुख्य रूप से मूल्य तटस्थ शोधकर्ताओं की बात करता है एवं यह कारण और प्रभाव के संबंध के द्वारा ज्ञान का निर्माण करता है। इस प्रकार से देखा जाये तो प्रत्यक्षवाद केवल उस घटना के माध्यम से सामाजिक वास्तविकता को समझाता है और विश्लेषित करता है, जिसे पूर्ण रूप से देखा और मापा जा सके। इस प्रकार से उत्पन्न ज्ञान सत्यापित तथ्यों पर आधारित होता है और यह सामान्यीकृत रूप में प्रयुक्त भी हो सकता है। प्रत्यक्षवाद का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि व्यक्तिगत मूल्यों को अनुसंधान के क्षेत्र मे प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी गयी है अर्थात यहाँ वस्तुनिष्ठता की धारणा मूलभूत है। अध्ययन/अनुसंधान की प्रक्रिया में शोधकर्ता की सब्जेक्टिविटी और रिफ्लैक्सिविटी की कोई आवश्यकता नहीं है।

इसके ठीक विपरीत नारीवादी कार्यप्रणाली एवं अनुसंधान को मूल्य तटस्थता के दायरे में कैद नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार के अध्ययन में शोधकर्ता और वे लोग जिन पर शोध किया जा रहा है; दोनों के ही 'अनुभव' और 'स्वर', इस सामाजिक अन्वेषन की प्रक्रिया में सर्वोपरि महत्व रखते हैं। नारीवादी अनुसंधान को अक्सर मेकिंग सेंस अर्थात् अर्थ निर्माण के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, जो कि गुणात्मक अनुसंधान के साथ जुड़े रहने का कारण और परिणाम दोनों है। गुणात्मक जांच और विषयनिष्ठता के बीच के संबंध के सन्दर्भ में दलाल और रविप्रिय (2015: 3) का तर्क है कि गुणात्मक अध्ययन सब्जेक्टिव अर्थात विषयनिष्ठ माना जाता है, क्यूंकि इसमें तथ्यों के संकलन और

उनके विश्लेषण तथा व्याख्या करने की प्रक्रिया में शोधकर्ता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यहॉ शोधकर्ता के सब्जेक्टिविटी और रिफ्लैक्सिविटी की महत्ता होती है तथा उसे इस बात की स्वतंत्रता होती है कि वह किस प्रकार से अपने अध्ययन समूह से शोध से संबंधित जानकारियों का संकलन करे। इस तरह की बात नारीवादी शोध में भी परिलक्षित होती है; यही कारण है कि इसे गुणात्मक अध्ययन से भी जोड़कर देखा गया है।

नारीवादी शोध प्रविधि दृष्टिकोणः विशेषता और सिद्धांत

शील्डस और डर्विन (1993ः 78) ने नारीवादी अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण चार व्यापक विषयों को रेखांकित किया है, जो इस प्रकार हैं : महिलाओं के अनुभवों को वैद्यता प्रदान करना तथा उन्हें महत्व देना; लिंग का सामाजिक निर्माण; नारीवादी शोधकर्ता का स्व–रिफ्लैक्सिविटी तथा नारीवादी अनुसंधान के द्वारा किसी भी प्रकार के प्रतिबन्ध और बंधनों से मुक्ति पाने की सम्भावना और क्षमता। कांग (2005ः 75) का तर्क है कि प्रत्यक्षवादी ज्ञान के सिद्धांत के विचार विमर्श ने महिलाओं को अपने ज्ञान–निर्माण के दायरे से बाहर कर दिया है। इस प्रकार के प्रत्यक्षवादी विचार विमर्श की विशेषताएं निम्नांकित हैंः

- तटस्थता के साथ ज्ञान ग्रहण करने की धारणा;
- ज्ञान की प्रक्रिया में वस्तुनिष्ठता की धारणा के प्रति एक मजबूत प्रतिबद्धता;
- निराकार सार्वभौमिक ज्ञान को एक आदर्श के रूप में स्थापित करने की परिकल्पना; और
- प्राकृतिक विज्ञान से संबद्ध वैज्ञानिक विधि को एक प्रतिमान के रूप में प्रतिष्ठित करने की प्रतिबद्धता।

हार्डिंग और नोरबर्ग (2005ः 2011–2012) ने नारीवादी कार्यप्रणाली और ज्ञान–मीमांसा की महत्वपूर्ण विशेषताओं को रेखांकित किया है। उनके अनुसार नारीवादी पद्धति की विशेषताएं निम्नलिखित हैः

- वंचित समूहों के लिए राजनीतिक और नैतिकता की दषष्टि से अधिक जवाबदेह;
- महिलाओं के जीवन में सुधार के लिए व्यावहारिक निहितार्थ होना;
- शोधकर्ता और शोध विषय अर्थात् जिन लोगों पर शोध हो रहे हैं, उनके बीच शक्ति–विभिन्नता को सीमित करने का प्रयास करना; और
- इस स्थिति को स्वीकार करना कि शोधकर्ता सामाजिक संबंधों को रूपांतरित कर सकता है।

फोनो और कुक (2005ः 2213) ने नारीवादी शोध पद्धति के निम्नलिखित सिद्धांतों को रेखांकित किया हैः

- सभी सामाजिक जीवन की एक बुनियादी विशेषता के रूप में लिंग और लैंगिक विषमता का महत्व;
- एक मेथोडोलॉजिकल (methodological) उपकरण के रूप में चेतना जागष्त करने की केन्द्रीयता;
- वस्तुनिष्ठता के नियमों को चुनौती देना, जो अनुभवों को अवैज्ञानिक घोषित करते हैं;
- नारीवादी अनुसंधान के नैतिक निहितार्थ;
- उस ज्ञान की आलोचना करना जो महिलाओं को ज्ञान की 'वस्तु' (ऑब्जेक्ट) के रूप में देखता है; और
- शोध और अनुसंधान के परिणाम के माध्यम से पितृसत्तात्मक सामाजिक संस्थाओं को रूपांतरित करने की सम्भावना।

सामाजिक विज्ञान में नारीवादी कार्यप्रणाली और ज्ञान–मीमांसा ने एक विरोधाभास को जन्म दिया है, जो कि तत्वीकरण (essentializing) की प्रक्रिया के फलस्वरूप स्त्री की विशेषताओं को जड़ कर देता है। इसका अर्थ यह है कि जहाँ एक ओर स्त्री की एक नयी परिभाषा गढ़ी जाती है वहीं दूसरी ओर स्त्री को एक स्त्री के रूप में ही देखा और समझा जाता है। अतः एक ओर स्त्री किसी भी तरह के परिवर्तन से परे है, वहीं स्त्रियों के जीवन में परिवर्तन लाना भी जरूरी है। यह स्त्री के जीवन को समझने के वैकल्पिक साधनों को न्यायोचित मानता है।

ज्ञान या अनुसंधान की प्रक्रिया के मूल्य–तटस्थता की प्रमुखता से नारीवादी आलोचना की गयी है। नारीवादी कार्यप्रणाली और ज्ञान–मीमांसा का यह पुरजोर मानना है कि तथ्यों का संकलन और विश्लेषण की प्रक्रिया को

सामाजिक संदर्भ भी प्रभावित करते हैं। ऐसा इसलिए है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने समाज का सदस्य होता है, समाज का सदस्य और समाजीकरण होने के परिणामस्वरूप उसके व्यक्तित्व में उन मूल्यों का सष्जन होता है, जिनको उसका समाज महत्वपूर्ण मानता है। इस तर्क की सार्थकता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि किसी भी प्रभुत्वशाली समूह का व्यक्ति अपने से कमजोर के सामाजिक सन्दर्भों को न तो सही तरीके से समझ सकता है और न तो उसका विश्लेषण और मूल्यांकन कर सकता है। ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति का अध्ययन पूर्ण नहीं माना जा सकता है। ऐसी ही बात पुरूषों के संदर्भ में भी कही जाती है कि उनके लिए स्त्रियों के संसार को समझना और उसकी सही व्याख्या करना एक 'ज्ञान के वैज्ञानिक मार्ग' और 'पुरूष केंद्रित ज्ञान' (जिसे हम प्रत्यक्षवाद के नाम से जानते हैं) से संभव नहीं है; इसके लिए हमें नारीवादी शोध प्रविधि का ही उपयोग करना होगा।

नारीवादी अनुसंधान विधियों एवं कार्यप्रणाली अध्ययन का कार्यरत दषष्टिकोण गुणाात्मक दषष्टिकोण है, जिसमें रिफ्लैक्सिविटी की अवधारणा प्रमुख मानी जाती है। गुणात्मक अनुसंधान किसी भी शोध विषय के बारे में विषयनिष्ठ और गहन अध्ययन है। दलाल और रविप्रिय (2015ः 3) ने सामाजिक अनुसंधान में विषयनिष्ठता और रिफ्लैक्सिविटी के बीच अंतर–संबंध पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि ''गुणात्मक अनुसंधान के क्षेत्र में एक शोधकर्ता की अपनी रिफ्लैक्सिविटी की सीमाओं और क्षमताओं का एक सार्थक परिप्रेक्ष्य में प्रयोग करता है।'' यहॉ तर्क यह है कि यह ''बाहर'' मौजूदा सामाजिक दुनिया का अध्ययन नहीं करता बल्कि यह सामाजिक वास्तविकता का 'अंदर से' वर्णन और सामाजिक घटना की व्याख्या करता है। ऐसा करने की प्रक्रिया में शोधकर्ता प्रतिभागी के व्यक्तिपरक अनुभव की खोज करता है और यह जानने अथवा अध्ययन करने का प्रयास करता है कि किस प्रकार से प्रतिभागी अपने 'जीवन लोक (life-world) का निर्माण करता है।

निष्कर्ष

नारीवादी शोध पद्धति ने एक मजबूत और सार्थक तरीके से 'प्रत्यक्षवादी' ज्ञान के उत्पादन, वितरण और उपभोग की प्रक्रिया को चुनौती दी है। हेस्से–बीबर आदि (2004ः 11) ने रेखांकित किया है कि ''नारीवादी दृष्टिकोण प्रत्यक्षवाद के उन उत्तरों पर प्रश्न उठाता है जो कि ज्ञानशास्त्रीय प्रश्नों से संबंधित हैं, जैसे कौन ज्ञान धारण कर सकता है, किस प्रकार से और कैसे ज्ञान की प्राप्ति की जा सकती है एवं ज्ञान क्या है।" यहाँ सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है कि सिर्फ और सिर्फ 'पुरूषसत्तावादी ज्ञान' को ही व्यवस्थित ढंग से एकत्र किया हुआ ज्ञान माना जाता रहा है। इस तरह के ज्ञान को ही समझ के 'एकमात्र मार्ग' के रूप में परिलक्षित किया जाता रहा है। नारीवादी शोध ज्ञान के एक वैकल्पिक स्वरूप को हमारे समक्ष उद्धाटित करता है जिसके द्वारा हम सामाजिक वास्तविकता को एक अलग दृष्टिकोण से देखने में सक्षम होते हैं।

दूसरा मुख्य बिंदु यह है कि नारीवादी शोध पद्धति ने अध्ययन के तथाकथित रूप से तर्कसंगत और वैज्ञानिक आयाम के आधिपत्य को चुनौती दी है। इसने एक तरह से वस्तुनिष्ठता की संकल्पना की आलोचना करते हुए विषयनिष्ठता और रिफ्लैक्सिविटी के विचारों का समर्थन किया है। इसका यह भी मानना है कि चुँकि शोधकर्ता एक व्यक्ति होने के साथ–साथ एक समाज का एक अंग भी है; अतः सामाजिक अन्वेषण की प्रक्रिया में उसके सामाजिक मूल्य एवं सांस्कृतिक प्रतिमान कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में उसकी शोध प्रक्रिया को प्रभावित करने में सक्षम हैं। अनुसंधानकर्ता के द्वारा तार्किकता पर बहुत ज्यादा जोर तथा मात्रात्मक / संख्यात्मक / गणनात्मक विश्लेषण करने के कारण कई बार ऐसा होता है कि मात्रात्मक शब्दावलियां 'तथ्यों' से भी महत्वपूर्ण हो जाती हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि ज्ञान के निर्माण के शास्त्रीय प्रत्यक्षवादी दृष्टिकोण के एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में नारीवादी शोध पद्धति को देखा जा सकता है। यह कार्यप्रणाली ज्ञान के एक वैकल्पिक आधार के रूप में भावनाओं और प्रतिभागियों के अनुभवों का भी अध्ययन करती है। यह अनुभव महिलाओं के दैनिक जीवन का अंग होने के साथ–साथ उनके उत्पीड़न के अनुभव का हिस्सा भी है। इस उत्पीड़न की सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन नारीवादी शोध द्वारा किया जाता है। निष्कर्ष के रूप में अति महत्वपूर्ण बात यह है कि नारीवादी शोध एवं नारीवादी ज्ञान की प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठता की संकल्पना के अंतर्गत सम्मिलित नहीं किया जा सकता। यह वस्तुनिष्ठता बनाम

विषयनिष्ठता का द्वन्द्व है। हम इस तर्क से बाहर निकल रहे हैं कि यह दृष्टिकोण महिलाओं के जीवन का अध्ययन करने में सहायक नहीं है। कभी–कभी नारीवादी कार्यप्रणाली 'भागीदारी शोधकार्य' का भी रूप लेता है। इस संदर्भ में हार्डिंग (2004: 44) का मानना है कि सभी ज्ञान सामाजिक रूप से स्थित ज्ञान हैं। इसका अभिप्राय यह है कि ''नारीवादी दृष्टिकोण 'स्त्री'_होने पर जोर देती है। यह एक 'स्त्री' को समझने के लिए अधिक लाभप्रद स्थिति में है। अतः नारीवादी शोध स्त्रियों के अनुभवों में 'स्थित' एवं केंद्रित है। इस तरह का ज्ञान के प्रति दृष्टिकोण नारीवादी ज्ञान–मीमांसा और कार्यप्रणाली की आधारशिला के लिए महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

हेस्से–बीबर, षार्लीन। 2014 ''अ रेइनवेंशन टू फेमिनिस्ट रिसर्च'', इन शार्लीन हेस्से–बीबर (सम्पादित): फेमिनिस्टि रिसर्च प्रैक्टिसः अ प्राइमर। थाउजेंड ओक्स, कैलिफोर्निया : सेज प्रकाषन, इंक, पृष्ठ संख्या –1–13.

रेगे, शर्मिला, 2003 सोशियोलॉजी ऑफ जेन्डरः थी चैलेंज ऑफ फेमिनिस्ट सोशियोलॉजिकल नौलेज। नई डेल्ही ' सेज.

हार्डिंग, सैंड्रा, जी0 1987 : इंट्रोडक्शन : इस थेरे अफेनिस्ट मेथड?'', इन सैंड्रा, जी. हार्डिंग (सम्पादित) : फेमिनिज्म एण्ड मेथोडोलोजी : सोषल साइंस इश्यूज। अमेरिका : इंडिआना यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0 सं0 1–14

एंडरसन, इ. 1995, ''फेमिनिस्ट एपिस्टेमोलोजीः एन्न इंटरप्रेटेषन एण्ड अ डिफेंस,'' हाईपटिआ, समर, 10 (3) : 50–84

फूको, माइकल। 1994 ''टू लेक्चर्स'', इन निकोलस ब0 डर्क्स, गेओफ्फ एली एंड शैरी ब. ओर्टनेर (सम्पादित) : कल्चर/पावर/हिस्ट्रीः अ रीडर इन कंटेम्परी सोशल थ्योरी। प्रिंसटन, न्यू जर्सी : प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0सं0 – 200–221

कुमार, नीता, 1994 ''इंट्रोडक्शन'' इन नीता कुमार (सम्पादित): वीमेन ऐस सब्जेक्ट्सः साउथ एषियन हिस्टोरिस। चारलोटेसवेले एंड लंदन यूनिवर्सिटी प्रेस ऑफ वर्जिनिया। पृ0सं0 1–25

हेस्से–बीबर, शार्लीन, पी. लवी एंड ऍम अल. येसेर, 2004. ''फेमिनिस्ट अप्रोचेस टू रिसर्च ऐस अ प्रोसेसः रेकॉन्सेप्टुअलिसिंग एपिस्टेमोलोजी, मेथोडोलोजी एंड मेथड'', इन शार्लीन हेस्से–बीबर एंड ऍम अल. येसेर (सम्पादित) : फेमिनिस्ट पर्सपेक्टिव्य ओन सोशल रिसर्च। न्यूयॉर्क : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0सं0 3–26.

दलाल, अजीत कुमार एंड कुमार रवि प्रिय, 2015– ''इंट्रोडक्शन टू क्वालिटेटिव रिसर्च'', इन अजीत कुमार दलाल एंड कुमार रवि प्रिय (सम्पादित) : क्वालिटेटिव रिसर्च इन इलनेस, वेलबीइंग एंड सेल्फ ग्रोथ। नई देल्ही : रूटलेज, पष्0सं0–1–22

शील्ड्स, वि.आर. एंड बी. डर्विन। 1993– ''सेंस–मेकिंग इन फेमिनिस्ट सोशल साइंस रिसर्च : अ कॉल टू एनलार्ज थी मेथोडोलॉजिकल ऑप्शंस ऑफ फेमिनिस्ट स्टडीज'', वीमेनस स्टडीज इंटरनेशनल फोरम, 16(1) : 65–81

कांग, एल, एच, यी, 2005, ''एपिस्टेमोलोजिस'', इन पी. एस्सेद एट. अल (सम्पादित): ए कम्पैनियन टू जेंडर स्टडीज। यूनाइटेड किंगडमः ब्लैकवेल पब्लिशिंग, पृ0सं0, 73–86.

हार्डिंग, एस एंड के. नोरबर्ग, 2005, ''न्यू फेमिनिस्ट अप्रोचेस टू सोशल साइंस मेथोडोलोजिस ऐन इंट्रोडक्शन, सिग्न्स, 30(4) : 2009–2015.

फोनो, एम. एम. एंड जे. ए. कुक, 2005, ''फेंमिनिस्ट मेथोडोलोजी : न्यू ऍप्लिकेशन्स इन थी एकेडेमी एंड पब्लिक पॉलिसी'', सिग्न्स, 30(4) : 2211–2236

हार्डिंग, सैंड्रा, जी, 2004, ''रिथिंकिंग स्टैंडपॉइंट एपिस्टेमोलोजी : व्हाट इस 'स्ट्रॉन्ग ओब्जेक्टिविटी?'', इन शार्लीन हेस्से–बीबर एंड ऍम अल. येसेर (सम्पादित) : फेमिनिस्ट पर्सपेक्टिव्य ओन सोशल रिसर्च। न्यूयॉर्क : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0सं0 39–64